E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

महादेवी वर्मा के काव्य में दर्शन एवं भावपक्ष की प्रासंगिकता

डॉ. जय सिंह यादव
सहायक आचार्य
पी0के0 विश्वविद्यालय करैरा, शिवपुरी (म0प्र0)
सुनीता गुर्जर
शोधार्थी विषय हिंदी
पी.के. विश्वविद्यालय करैरा
शिवपुरी (म.प्र.)

Paper Rcevied date
05/12/2025
Paper date Publishing Date
10/12/2025
DOI
https://doi.org/10.5281/zenodo.18312831

IMPACT FACTOR
5.924

शोध-सार

महादेवी वर्मा की काव्य रचनाएँ दर्शन, रहस्य, वेदना, करूणा और प्रतीकों की ऐसी दुनिया में ले जाती हैं, जहाँ छायावादी काव्य संस्कारों का चरम रूप विद्यमान है। उनकी कविता में आत्मानुभूति की गहराई है और भटके हुए पथिकों के लिए दिशा निर्देश भी।

महादेवी वर्मा अपने काव्य साहित्य में एक वृहत्तर मानवीय संवेदना के भाव को प्रस्तुत करती हैं, उनके काव्य साहित्य में मूल्यगत चिंताएँ हैं, पर उन्होंने दर्शन बघारने का, उपदेशक बनने या फतवा देने की भूल नही की और इसलिए वे सर्जन की लम्बी यात्रा कर सकीं, सार्थक, ईमानदार, निर्मल यात्रा जिसकी सीमांए हो सकती हैं, पर सार्थकता जगजाहिर और किसी भी दौर में यह निःसंकोच कहा जायेगा कि उनके काव्य साहित्य में एक पथरेखा जिस पर एक प्रतिभा निर्भीक भाव से, पूरे आत्मविश्वास के साथ चलती रही।

मुख्य बिन्दु :- आत्मानुभूति, सार्थक, ईमानदार, निर्मल, आत्मविश्वास

हिन्दी साहित्य में महादेवी वर्मा की रहस्यवादी कविताओं का ऐतिहासिक महत्व है। इनके लेखन द्वारा मनुष्य में आत्मप्रसार तथा आत्म-विश्वास की भावना जगाई। प्राचीनता की कारा में घिरे हुए मन को उन्मुक्त असीम वातावरण दिया; विश्व मानवता की सार्वभौम भावना उत्पन्न की, स्थूल तथ्यों को भेदकर जीवन सत्य को देखने की अंतर्दृष्टि दी और गहन अनुभूति के क्षणों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण किया।

मेरे श्याम जब से गए हैं, तब से दूज के चाँद हो गए हैं। कुछ पल के लिए दिखाई देते हैं और फिर अदृश्य हो जाते हैं। मधुबन (मथुरा) में जाकर वे मधुबन के ही हो गए हैं। लेकिन जाने से पहले मुझपर प्रेम का फंदा डाल गया जिसमें मैं तड़प रही हूँ। महोदवी वर्मा ने अपने काव्य में करूणा के महत्व का प्रतिपादन करते हुए लिखा है–

"आज करूणास्नात उजाला, दुःख हो मेरा पुजारी।"[1] मीरा कहती हैं, कि हे प्रभु गिरधरनागर! अवश्य मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम कम हो गया है, अन्यथा मथुरा जाकर भी एक बार मेरी सुध अवश्य लेते।

महादेवी वर्मा के काव्य साहित्य में दुःख का भाव प्रतीत होता है **जो असंख्य व्यक्तियों में अपना दुःख खोकर बोलता है, उसके कंठ में असीम बल रहना अनिवार्य है।"**[2] महादेवी ने अपने जीवन में शूलों का सेतु बाँधा है, उन्होंने विश्व के इतिहास में अपने विरह की व्यथा–कथा गूँथने का संकल्प ले लिया है।

उनमें भक्त सुलभ कातरता का अभाव है अड्डैर महाकरूणा की संकल्पात्मक अनुभूति तथा कारणों से रहस्यवाद की अनुभूति आई है और यही वेदनानुभूति को एक विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्वरूप प्रदान करता है।"[3]

महादेवी की वेदना में त्याग और बलिदान की भावना है, ऐसा बलिदान, जो दूसरों का दुःख दूर कर सके। उनकी वेदना ऐसी सामानय वेदना नहीं है, जो साधारण परिस्थितियों के घात–प्रतिघातों से अपने साधन–पथ से विचिलत हो जाए।

तुम दुख बन इस पथ से आना!सूलों में नित मुदु पाव्ल–सा
खिलने देना मेरा जीवन/क्या हार बनेगा वह जिसने सीख न
हृदय को बिंधवाना!"[4]

कबीर की तरह महादेवी का प्रियतम अज्ञात है, जबकि मीरा का ज्ञात। जिस प्रकार 'सुनि सखि जिउ मंह जिउ बसे कि पीड़' कह कर कबीर ने अपने तपःपुत शरीर को ही प्रियतम के चरणों में न्योछावर किया उसी प्रकार महादेवी भी अपने भाव व्यक्त करती हैं–

"क्या पूजा अर्चन रे
उस असीम का सुना मन्दिर मेरा लघुतम जीवन रे
मेरा स्वासें करती रहती नित्य प्रिय का अभिनंदन रे।"[5]

महादेवी में जीवात्मा और परमात्मा के आश्रय और आलम्बन के सम्बन्ध में वैपरीत्य की प्रेरणा अपनी मौलिक उद्‌भावना नहीं है। महादेवी की रचनाओं में प्रेम का वेदनात्मक स्वरूप आध्यात्मक और प्रकृति का संगम करता नजर आता है।

वेद काल का मानव भौतिक जीवन का भावुक कलाकार ही नहीं, आत्मा का अथक शिल्पी भी है। प्रकृति में उसका सौन्दर्य–दर्शन केवल कोमल मधुर तत्वों तक ही सीमित नहीं है, वरन् वह अपने पार्थिव परिवेश को उज्ज्वल रेखाओं और इन्द्रधनुषी रंगों में चित्रमयता देता है, उसी से अपने अन्तर्जगत

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

में मंगल संकल्पों को अजर मूर्तिमत्ता प्रदान करता है। उसकी जिस तुला पर ज्ञान की गरिमा तुलती है, उसी पर कर्म-पथ पर पड़े प्रत्येक पग का मूल्य निश्चित होता है।

उषा की दीप्ति छवि अंकित करने में जिस कुशलता का उपयोगहुआ है, वही नासदीय सूक्त में जिज्ञासाओं को सार्थक वाणी दे सकी है। जिस भक्तिजनित तन्मयता से वह ऋत के रक्षक वरूण की वन्दना करता है, उसी के साथ इन्द्र के वज्र-निर्घोष के आह्वान में प्रवृत्त होता है। अपने आपको 'पृथ्वीपुत्र' की संज्ञा देकर वह धरती के वरदानों का जैसा आदर देता है, 'आत्मा का विनाश नहीं होता' स्वीकार कर वह अखण्ड चेतना के प्रति भी वैसा ही विश्वास प्रकट करता है। किसी अन्य युग के काव्य में जिन्हें स्थान मिलना कठिन है, उन विषयों को भी छन्दायित करने में ऋषि की प्रतिभा कुण्ठित नहीं हुई। उलूक, दादुर, ऊखल, श्वान आदि ऐसे ही विषय हैं।

जीवन को सब ओर से स्पर्श करने वाली दृष्टि मूलतः और लक्ष्यतः सामंजस्यवादिनी ही होती है। वेद-साहित्य में आकाश, अन्तरिक्ष और पृथ्वी में व्याप्त शक्तियों को जो देवत्व प्राप्त हुआ है उसमें भी एक विशेष तारतम्यता का सौन्दर्य मिलता है।

सूर्य, उषा, वरूण आदि आकाश में सबसे ऊँची स्थिति रखने के कारण सृष्टि का नियमन और संचालन करते है। वायु-मंडल में स्थिति रखने वाले इन्द्र, मरूत आदि उथल-पुथल उत्पन्न करके भी जल-वृष्टि से पृथ्वी को उर्वर बनाते हैं। अग्नि और सोम की पृथ्वी पर इतनी उपयोगी स्थिति थी कि वे पृथ्वी के ही देव मान लिए गए।

यह देवताओं की अनेकता धीरे-धीरे एक केन्द-बिन्दु में समाहित हो गई, परन्तु वेदकालीन चिन्तक की जिज्ञासा किसी एक व्यक्ति देव तक पहुँचकर रुकनेाली नहीं थी। अतः इस अनेकता का विलय एक अखंड व्यापक चेतना में उसी प्रकार हो गया जैसे विभिन्न तरंग, बुद्बुद आदि समुद्र से बनकर उसी में विलीन हो जाते हैं।

इन देवताओं और प्रकृति पर आरोपित चेतना-खंडों की कल्पना को, वैदिक कवि ने सौंदर्य की जिन रेखाओं में बाँधा है वे तत्त्वतः भारतीय है। उनका अपने परिवेश में अविच्छिन्न सम्बन्ध ही उनकी सर्वमान्यता का कारण है। खंड सौंदर्य को विराट की पीठिका पर रखकर देखने का संस्कार गहरा है, अतः देवत्व से अभिषिक्त न होने पर भी वे खंड अपनी स्वतः दीप्ति से दीपित हो उठते हैं। पृथ्वी, नदी, अरण्य आदि अपनी सत्ता विशेष के कारण ही जीवनके सहचर और किसी व्यापक अखंड के अंशभूत रहकर सार्थकता पाते हैं। वैदिक चिन्तक की तत्व-स्पर्शी दृष्टि, सृष्टि की असीम विविधता को पार कर एक तत्वगत सूत्र खोज लेती है।

वेद साहित्य की चिन्तन-पद्धति ने यदि भारतीय चिन्तन को दिया ज्ञान दिया है तो उसकी रागात्मक अनुभूति ने भावी युगों की काव्य-कलाओं में स्पंदन जगाया है। प्रकृति से रागात्मक सम्बन्ध, उस पर चेतन व्यक्तित्व का आरोप, रहस्य को व्यक्त करने वाली जटिल उक्तियाँ, भक्तिजनित आत्म-निवेदन आदि बिना कोई संस्कार छोड़े हुए अर्न्तहित हो गए, यह समझना मानव-चेतना की संश्लिष्टता पर अविश्वास करना होगा।

यह अनुभव-सिद्ध है कि भाषा की परम्परा और पुस्तकीय ज्ञान का क्रम टूट जाने पर भी मनुष्य की बुद्धि और उसका हृदय, पूर्व संस्कारों का दाय सुरक्षित रखने में समर्थ है। संस्कृति इसी रक्षा का पयार्य है और इसी कारण लिखित शास्त्रीय ज्ञान से अपरिचित भारतीय ग्रामीण, नागरिक से अधिक संस्कृत कहा जायेगा। वैदिक कालीन संस्कार निधि भी इसी प्रकार सुरक्षित रही हो तो आश्चर्य नहीं।

भाग्य से मैं वह समृद्ध प्रवासी नहीं हूँ जिसके आशातीत विभूति लेकर घर लौट्ने पर परिचित भी अपरिचित के समान प्रश्न कर बैठ्ते हैं, क्या तुम वही हो! प्रत्युत् मेरी अवस्था उस सम्बलहीन वामन जैसी है जो अपनी सारी लघुता समेट कर द्वार पर बैठा-बैठा नया पुराना हो जाता है।

नीहार के धुँधलेपन में मैं सभीत-सी-भारती-मन्दिर की जिस पहली सीढ़ी पर आ खड़ी हुई थी अब तक वहीं हूँ, कारण, न कभी शिथिल पैरों में आगे बढ़ने की शक्ति आई और न उत्सुक हृदय ने लौट जाने की प्रेरणा ही पाई। इन असंख्य ऊँची सीढ़ियों पर आने-जाने वाले पूजार्थियों ने निरन्तर देखते ही मेरे विषय में अनेक प्रश्नों का समाधान कर लिया होगा; उनका कुतूहल अति परिचय-जनित उपेक्षा में परिवर्तित हो चुका होगा। अब मैं अपने विषय में कौन-सी नवीन बात कहूँ।

सान्ध्य गीत में नीरजा के समान ही कुछ स्फुट गीत संग्रहीत हैं। नीहार के रचना-काल में मेरी अनुभूतियों में वैसी ही कुतूहलमिश्रित वेदना उमड़ आती थी जैसी बालक के मन में दूर दिखाई देने वाली अप्राप्य सुनहली उषा और स्पर्श से दूर सजल मेघ के प्रथम दर्शन से उत्पन्न हो जाती है, रश्मि को उस समय आकार मिला जब मुझे अनुभूति से अधिक उसका चिन्तन प्रिय था परन्तु नीरजा और सान्ध्य गीत मेरी उस मानसिक स्थिति को व्यक्त कर सकेंगे जिसमें अनायास ही मेरा हृदय सुख-दुख में सामंजस्य का अनुभव करने लगा। पहले बाहर खिलने वाले फूल को देखकर मेरे रोम-रोम में ऐसा पुलक दौड़ जाता था मानो वह मेरे ही हृदय में खिला हो, परन्तु उसके अपने से भिन्न प्रत्यक्ष अनुभव में एक अव्यक्त वेदना थी थ्ज्ञी; फिर यह सुख-दुख-मिश्रित अनुभूति ही चिन्तन का विषय बनने लगी और अन्त में अब मेरे मन में न जाने कैसे उस बाहर-भीतर में एक सामंजस्य सा ढूँढ़ लिया है जिसने सुख-दुख को इस प्रकार बुन दिया कि एक के प्रत्यक्ष अनुभव के साथ दूसरे का अप्रत्यक्ष आभास मिलता रहता है।

द्विवेदी युग की कविता स्थूल तथ्यों के संगह और कोरे वस्तु वर्णन में व्यस्त थी, रहस्यवाद के आविर्भाव ने काव्य में जीवन के मौलिक सत्यों और रहस्यों के प्रति जिज्ञासा का भाव जगाया। जीवन की क्षुद्रताओं से मनुष्य को ऊपर उठाकर उसे उच्च भाव-भूमि पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय रहस्यवाद को ही है।

इन सबके बावजूद रहस्यवादी कविता की अपनी सीमाएं भी हैं। रहस्यवादी दृष्टिकोण से जीवन और जगत् की समस्याओं का हल संभव नहीं है। रहस्यवादियों का विश्वास था कि परम सत्य अज्ञात और अज्ञेय है और उसे ऐसा ही रहने देना चाहिए क्योंकि उसकी अज्ञेयता में ही आनंद है। इस तर्क प्रणाली के फलस्वरूप अबुद्धिवाद, श्रद्धावाद, आत्मविस्मृति, अचेतना आदि प्रवृत्तियों का प्रचार हुआ और फिर चिंतनशील मनुष्य के लिए रहस्यालोक में पलायन करने के सिवाऔर कोई रास्ता नहीं दिखाई

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

दिया। रहस्यवाद के इस हानिकारक रूप को देखत हुए ही आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उस समय का उसका विरोध किया था।

संदर्भ सूची

1. महादेवी वर्मा, सांध्यगीत, अलका प्रकाशन कानपुर, संस्करण 2006, पृ.27
2. महादेवी वर्मा, दीपशिखा, चिंतन के कुछ क्षण, अलका प्रकाशन कानपुर, संस्करण 2011, पृ.41
3. डॉ. जयकिशन प्रसाद, महादेवी का वेदनाभाव, कल्पना प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2011, पृ.26
4. महादेवी वर्मा, नीरजा, वाणी प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 2009, पृ.15
5. महादेवी वर्मा, यामा, वाणी प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 2009, पृ.159